प्राक् कथन

यह षट्खण्डागमका पन्द्रहवाँ भाग प्रस्तुत है। इसके पश्चात् शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाले सोलहवें भागमें इस ग्रन्थराजकी परिसमाप्ति हो जावेगी।

इन दोनों भागों की रचना ध्यान देने योग्य है। अग्रायणीय पूर्वके चयनलब्धि अधिकारके अन्तर्गत कर्मप्रकृतिप्राभृतके कृति, वेदना आदि चौबीस अनुयोगद्वारोंमें से प्रथम छहपर ही भूतबलि स्वामी कृत सूत्र पाये जाते हैं। शेष अठारह अधिकारोंपर सूत्र-रचना नहीं पाई जाती। इसकी पूर्ति धवला-कार श्री वीरसेन स्वामीने की है। इन शेष अठारह अनुयोगद्वारोंमें से प्रथम चार अर्थात् निबन्धन, प्रक्रम उपक्रम और उदय की प्ररूपणा प्रस्तुत भागमें की गई है। शेष मोक्ष, संक्रम आदि चौदह अनुयोगद्वारोंका प्ररूपण अन्तिम भागमें प्रकाशित होगा।

इन चौबीस अनुयोगद्वारोंके मूल स्रोतका जो उल्लेख धवलाकारने किया है उससे हमें महावीर भगवान्के गणधरों द्वारा रचित द्वादशांगके भीतर पूर्वोंके विषय व विस्तारका कुछ सुस्पष्ट विचार प्राप्त होता है। चौदह पूर्वोंमें द्वितीय पूर्वका नाम था आग्रायणीय, जिसके पूर्वान्त, अपरान्त आदि १४ अधिकारों में से पाँचवें अधिकारका नाम था चयनलब्धि। इसके बीस पाहुड थे जिनमें चतुर्थ पाहुडका नाम था कर्मप्रकृति। इसी प्रकृतिके कृति, वेदना आदि अल्पबहुत्व पर्यन्त वे चौबीस अनुयोगद्वार थे जिनकी संक्षेप प्ररूपणा षट्खण्डागमके वेदना, वर्गणा, खुद्दाबंध और महाबंध इन चार खंडोंमें पाई जाती है (देखिये प्रथम भागकी प्रस्तावना पृ० ७२)। इन अनुयोगद्वारोंके मूल पाठका ज्ञान परम्परानुसार तो अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहुके पश्चात् नष्ट हो गया था। तथापि उसके कुछ खंडोंका ज्ञान तो धरसेन स्वामीको भी था जिसका उपदेश उन्होंने पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्योंको दिया था। किन्तु धवला टीकाके रचयिता स्वामी वीरसेनने कहीं कहीं ऐसे उल्लेख किये हैं जिनसे प्रतीत होता है कि उनके समय तक भी पूर्वोंके मूल पाठ सर्वथा नष्ट नहीं हुए थे। उदाहरणार्थ, प्रस्तुत भागमें ही अकरणोपशामनाकी प्ररूपणा करते हुए उन्होंने कहा है कि " कर्मप्रवाद नामक आठवें पूर्वमें सब कर्मोंकी मूल व उत्तर प्रकृतियोंके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार विपाक और अविपाक पर्यायोंका वर्णन खूब विस्तारसे किया गया है, वहाँ उसे देख लेना चाहिये " (पृ० २७५)। यदि आचार्यके समयमें उक्त मूल रचना उपलब्ध न होती तो 'इस प्रकरणको वहाँ देख लेना चाहिये' यह कहनेका कोई अर्थ नहीं रहता। दूसरे, भूतबलि आचार्यके सूत्र न रहनेपर भी उन्होंने शेष अठारह अधिकारोंकी प्ररूपणा की है उसका कुछ आधार तो उनके सन्मुख रहा ही होगा। जिस विषयपर उन्हें कोई आधार नहीं मिला वहाँ उन्होंने स्पष्ट कह दिया है कि इसका कोई उपदेश प्राप्त नहीं है (देखिये पृ० ८१, २१६ आदि)।

इस भागके साथ प्रस्तुत चार अनुयोगद्वारोंपर जो 'पंजिका' नामक टीका प्राप्त हुई है वह भी प्रकाशित की जा रही है। उसकी उत्थानिकासे ऐसा प्रतीत होता है कि वह समस्त शेष अठारह अनुयोगद्वारों-

पर लिखी गई है। किन्तु जो प्रति मूडबिद्रीसे महाबंधकी प्रतिके साथ प्राप्त हुई है वह केवल इन्हीं चार अनुयोगद्वारोंपर है। शेषकी खोज करना आवश्यक प्रतीत होता है।

ग्रंथ सम्पादन व प्रकाशनमें श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी, उनके सुपुत्र राजेंद्रकुमारजी, पं० नाथूरामजी प्रेमी, श्री रतनचंदजी, नेमचंदजी तथा मेरे सहयोगियोंका साहाय्य पूर्ववत् चला आ रहा है जिसके लिए मैं उनका अनुगृहीत हूँ।

प्राकृत जैन विद्यापीठ
मुजफ्फरपुर, बिहार, १८-४-५७

हीरालाल जैन
(डायरेक्टर, प्राकृत जैन विद्यापीठ, वैशाली)